समकालीन शिक्षा-चिन्तन की मासिक पत्रिका

दिसम्बर, 2011

BEN CARSON M.D.
with Cecil Murphey
GIFTED HANDS
The Ben Carson Story
AS SEEN ON ABC NEWS 20/20
THE REMARKABLE SURGEON
WHO GIVES CHILDREN A
SECOND CHANCE AT LIFE

**बालकों को नया जीवन देने वाले एक डॉक्टर
के शिक्षित होने की संघर्ष कथा**

समिति में मीडिया फाउंडेशन की कार्यशाला का आयोजन

❏

जयपुर में एक अनौपचारिक संगठन है। नाम है मीडिया फाउंडेशन। इसको अभी तक कोई संस्थागत स्वरूप नहीं दिया गया है और न ही एक रजिस्टर्ड संस्था के रूप में इसकी स्थापना की गयी है। मगर यह संस्था पिछले दस वर्षों से भी अधिक समय से निरन्तर चल रही है। काम है नौजवान पत्रकारों को एवं मीडिया कर्मियों को मित्र बनाना और उन्हें पढ़ने लिखने के प्रति प्रेरित करते हुए सही दृष्टि देना। मीडिया फाउंडेशन श्री प्रमोद शर्मा के नेतृत्व में चलती है मगर दूसरे भी कई साथी इनके साथ जुटे हैं।

समिति कार्यालय में गुरुनानाक जयन्ती, 10 नवम्बर के दिन एक दिवसीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया। इस संगोष्ठी में साठ से अधिक नौजवान मीडिया कर्मियों ने भाग लिया इनमें इलेक्ट्रोनिक मीडिया के लोग भी थे और पत्रकार एवं रेडियो-कर्मी भी ।

सभी नौजवान साथी मीडिया के दर्शन और दृष्टि पर चर्चा करते हुए अपने भावी योगदान पर विचार कर रहे थे। परस्पर मिलना और अनुभव बांटना भी बहुत उपयोगी रहा। ❏

अनौपचारिका

समकालीन शिक्षा-चिन्तन की मासिक पत्रिका

दिसम्बर, २०११

बालकों को नया जीवन देने वाले एक डॉक्टर के शिक्षित होने की संघर्ष कथा

असतो मा सद्गमय।
तमसो मा ज्योतिर्गमय।
मृत्योर्मा अमृतम्गमय।

अनौपचारिका

समकालीन शिक्षा-चिन्तन की पत्रिका

वर्ष : ३६ अंक : १२
दिसम्बर,२०११
मार्गशीष-पौष वि.सं. २०६८

☐
सम्पादक
रमेश थानवी

☐
प्रबन्ध संपादक
प्रेम गुप्ता

☐
प्रकाशन संपादक
दिलीप शर्मा

☐
- एक प्रति पन्द्रह रुपए
- वार्षिक सहयोग राशि एक सौ पचास रुपए
- संस्थाओं के लिए दो सौ पचास रुपए
- व्यक्तिगत सदस्यों के तीन वर्ष का चार सौ रुपए
- संस्थाओं के लिए तीन वर्ष का छः सौ रुपए
- मैत्री समुदाय की सहयोग राशि पन्द्रह सौ रुपए

राजस्थान प्रौढ़ शिक्षण समिति
७-ए, झालाना डूंगरी संस्थान क्षेत्र
जयपुर-३०२ ००४
फोन - २७०७६९८, २७००५५९
फैक्स - ०१४१-२७०७४६४
ई मेल - raeajaipur@indiatimes.com
thanviramesh@gmail.com
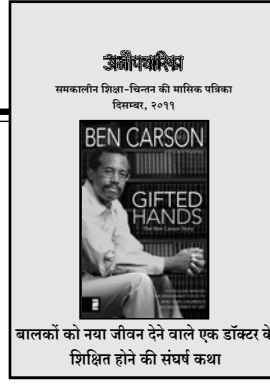
क्रम

जयपुर से नरेन्द्र शर्मा 'कुसुम'

अनौपचारिका नियमित रूप से मिल रही है। अभिभूत हूं, धन्यवाद बहुत छोटा शब्द है। हां, एक अपराध बोध जरूर साल रहा है, आपसे अब तक संवाद क्यों नहीं? दोष मेरा ही है, प्रमाद का। अनौपचारिका के सभी अंक बेजोड़ होते हैं। सभी में आपका अंतरंग बोलता है। संपादकीय मौलिक एवं नेत्रोन्मीलक होते हैं। अक्टूबर-नवम्बर, २०११ का अंक सामने हैं। लिखना चाहूं तो बीस-पच्चीस पन्ने भी कम पड़ेंगे। **'कबीर का करघा और गांधी का चरखा'** कितना अद्भुत सोच है। अभिव्यक्ति में कविता का स्वाद है। कितनी हृदयस्पर्शी टिप्पणी है- 'दोनों (कबीर-गांधी) के रिश्तों को तर्क से नहीं समझा जा सकता सिर्फ ज्ञान से समझा जा सकता है और प्रेम की पूर्णता से समझा जा सकता है।' कितनी शाश्वत समझ है! बधाई आपको। अनपुम मिश्र के व्याख्यान को देकर आपने वाकई अनुपम कार्य किया है। ऐसे पारदर्शी व्यक्तित्व ही हमारे 'रोल मॉडल' हो सकते हैं। इसे कहते हैं गांधी को 'मनसा-वाचा-कर्मणा' जीना। इस लेख में अनेक विचार उद्धरणीय एवं मननीय है। स्व. प्रभाष जोशी का अनुपम मिश्र पर लिखा लेख भी उस तासीर का है। ऐसी श्रेष्ठ सामग्री आप ही दे सकते हैं। इस अंक के अन्य लेख भी सुचयनित और हृदयग्राही हैं। डॉ. आनंद कश्यप की कविता बहुत प्रभावित करती है। बहुत अरसे बाद उनको कवि रूप में पढ़ना हुआ। पुराने चावलों का क्या मुकाबला। तौकीर तकी की गजल उम्दा है, एक नया अंदाज है। भाई भगवान अटलानी की पुस्तक 'अतीत के पैमाने' पर बीना करमचंदानी द्वारा लिखी समीक्षा अपने आप में मुकम्मल है।

चूरू से विश्वनाथ भाटी

अनौपचारिकाअक्टूबर-नवम्बर, २०११पढ़कर अतीव आनन्दानुभूति हुई। मुखपृष्ठ पर बच्चों की उन्मुक्त मुस्कान अन्दर तक बैठ गई। अपनी बात में कबीर का करघा और गांधी का चरखा के माध्यम से अन्तर्चक्षु जगाने की प्रेरणा मिली। श्लाघनीय प्रकाशन के साधुवाद व शुभकामनाएं। ❑

नयी दिल्ली से प्रेमपाल शर्मा

अनौपचारिका का अक्टूबर-नवम्बर २०११अंक। स्व. प्रभाष जोशी के लेख ' अनुपम आदमी' के लिये आभार। अनुपम मिश्र के व्यक्तित्व का तो बीस बरस पुराना खाका मिला। साथ ही प्रभाषजी की कलम की भी याद आयी। कितनी आत्मीय,स्नेहिल, सहज पारदर्शी भाषा में लिखते थे प्रभाष जी। क्रिकेट हो या गंभीर राजनीतिक,आर्थिक, सामाजिक मुद्दे। उन्हें न कभी शब्दों का टोटा पड़ा, न अभिव्यक्ति की विधा का। एक साथ उनके लेख रेखाचित्र, ललित निबन्ध,भाषण संस्मरण के अदभुत मिश्रण कहे जा सकते हैं। पता नहीं अंग्रेजी की पैराकार केन्द्रीय सरकार में मैकाले, मिल्टन के कौन दोगले वंशज बैठे हैं जिन्हें हिन्दी कठिन लगती है और उन्होंने हाल ही में ऐसा परिपत्र निकाला है जो विश्वविद्यालय और विद्यार्थी की जगह 'यूनिर्वसिटी और स्टूडेन्ट' लिखने की वकालत कर रहा है। प्रभाष जी होते तो सरकार की ऐसी कार्रवाई को धुनकर रख देते।

काश ! अनुपम मिश्र जैसे कर्मठ गांधीवादी पत्रकारों का प्रतिशत कुछ और ज्यादा होता।

पल्लवजी की चिट्ठी में दिल्ली का असर साफ है। दिल्ली में राजनैतिक वटवृक्षों के छांव में ऐसी भाषा सिखायी जाती है। बरसों से कई पार्टियों के कामरेड, लेखक भृष्टाचार के खिलाफ बात करते रहे हैं लेकिन कभी पच्चीस से ज्यादा की भीड़ नहीं जुटा पाये। अन्ना के साथ लोग स्वत: आये हैं। धैर्य रखिये पल्लव भाई,डर क्यों रहे हो, राजनैतिक पार्टियों की तरह। पार्टियों को तो अपने वजूद की समाप्ति का खतरा है। आप भी अन्ना को सलाह दो। किसी के उकसाने में क्यों भड़क रहे हो। यू.पी बिहार में एक भी **रालेगण सिद्धी** बनाकर दिखा दो। कई जनवादी दलों के तो वहां की असेम्बली में खाते भी नहीं खुल पाये। खैर ! अनौपचारिका ने अन्ना के संबंध में जो लाइन ली है मैं उसका पूरा समर्थन करता हूं। पल्लव के ईमानदार गुस्से का भी। नौजवान जो हैं। संपादकजी के कबीर से गांधी का जुड़ाव पसंद आया।❑

हापुड़ से सपना महेश

क्या कभी ऐसी कोशिश स्वत: ही की है कि ध्वनि से किसी के मन को कैसे समझा जाये। आपसे फोन पर ही बात हुई हैं मिलने का अवसर नहीं मिला। अनौपचारिका, अद्भुत है... खरे लोगों का खरा तप। मन से सींची गयी मन की बात। ❑

अपनी बात

शिक्षा का सच !

मैं **पिछले** पचास वर्षों से शिक्षा के सच को जानने और समझने की कोशिश में जुटा हूं । जितना खोजता हूं उतना ही उलझता हूं । शिक्षा के बीच रह कर के भी शिक्षा को समझने से बार-बार वंचित रह जाता हूं । यह स्थिति ठीक वैसी ही है जैसी कि मछली की होती है, पानी में रहकर वह प्यासी रहती है और संतों को इस पर हंसी आती है । मैं भी वैसी ही हंसी का पात्र हूं , कोई पाठक मदद करे तो बड़ा उपकार होगा ।

किसे कहूं मैं शिक्षा ? क्या है शिक्षा का सच? कैसा होता है शिक्षित व्यक्ति और कैसा होता है पढ़ा-लिखा समाज ? मेरे गुरु श्री दयालचन्द्र जी सोनी तो पूरी एक काव्यात्मक पुस्तक लिख गये । इस पुस्तक का नाम है **'हूं अणभणियों शिक्षित हूं'**। उनका आशय स्पष्ट है कि हर पढ़ा-लिखा आदमी अनपढ़ है। उन्होंने जब यह पुस्तक लिखी तो साफ कहा- कि यह किताब उनके पूरे जीवन की शिक्षा का सार है । तब फिर हमें यह भी मान लेना चाहिए कि हमारा पूरा पढ़ा लिखा समाज खासा अनपढ़ है । अशिक्षित है । तब फिर बताइए कि शिक्षा को कहां खोजें । न यह मन्दिर में मिलने वाली है, न किसी मदरसे में, न मस्जिद में,न गुरुद्वारे में और न ही किसी विद्यालय में। तब बताइए कि यह शिक्षा हमें कहां मिलेगी ? इसका स्वरूप क्या है? इसकी पहचान क्या है ? इसकी शक्ल सूरत क्या है और इसका सच क्या है ?

कहते हैं कि शिक्षा बालक के जन्म के साथ बालक को मिली प्रतिभा का विकास है । उसकी सोयी हुई शक्तियों को जगाने का नाम शिक्षा है । मगर ऐसा तो तब सम्भव है जब हम यह जान लें कि कौन-कौन सा बालक कौन-कौन सी प्रतिभा के साथ पैदा हुआ है ? उसके शरीर में एवं उसके मन-मस्तिष्क में कौन-कौन सी शक्तियां सोयी हुयी हैं ? इसका अर्थ यह हुआ कि जो-जो बालक शाला में आया है उसको हम पहले पढ़ें । हर बालक को पढ़-पढ़ कर पहचानें कि वह क्या है? उसकी प्रदत्त प्रतिभा क्या है? और कौन-कौन सी सुशुप्त शक्तियों को लिये हुए वह हमारे सामने उपस्थित हुआ है। अब हम जरा अपने से पूछें कि क्या आज का कोई भी विद्यालय ऐसा करता है ? आज के अध्यापकों के पास और साथ ही मकड़-जाल की तरह फैले हुए शिक्षातंत्र के

पास बालकों को पढ़ने का कोई अवकाश और कूवत है क्या ? बालकों को पढ़ने के लिए उनसे जुड़ना पड़ता है। उससे भी पहले दुलार से भरी किसी बाल-वत्सल व्यवस्था का विकास करना पड़ता है । और फिर बालकों को हुलरा कर, दुलरा कर उनके मन में प्रवेश करना पड़ता है । फिर एक-एक घड़े की तरह बजा-बजा कर उनको शिक्षित करना होता है । अब जरा हम अपने से पूछें कि क्या आज की शिक्षा के पास बालक को पढ़ने, पहचानने और उसकी काया में प्रवेश कर उसे जान लेने की कोई विद्या मौजूद है ? इस सवाल के जवाब में मैं ठिठका खड़ा रह जाता हूं और मेरे साथ ही उन तमाम पढ़े-लिखे अनपढ़ लोगों की फौज भी हतप्रभ खड़ी रह जाती है जो इस देश के विशाल शिक्षातंत्र के कारिन्दे हैं, मुलाजिम हैं, अफसर और मंत्री हैं ।

कहते हैं कि शिक्षा अभय देती है। ऐसा अभय देती है कि हर विद्यार्थी निर्भय और निडर होकर किसी भी संकट का सामना कर सकता है । मगर आज की शिक्षा का सच यह है कि हर विद्यार्थी घनघोर रूप से डरा हुआ है । डर उसकी रगों में बैठ गया है। डर दहशत में बदल गया है और सच यह भी है कि इस दहशत के मारे सैकड़ों विद्यार्थी आत्महत्या को विवश हो चुके हैं । अपनी देह लीला को समाप्त कर चुके हैं । अभी हाल ही में बारां जिले की तीन बेटियां अपने जीवन को जहर की गोलियां खा कर समाप्त कर चुकी हैं। शिक्षा का अगर असली सच यह है तो वह किसे अभय दे रही हैं ? दे भी भला कैसे सकती हैं? डराने धमकाने के तो सैकड़ों साधन शिक्षा पहले ही कांटों की तरह बिछा चुकी है। परीक्षाएं भी जहां पुलिस की देख-रेख में होती हो वहां अभय की क्या बिसात कि वो किसी शाला में प्रवेश कर जाय ? धन्य है ऐसी शिक्षा जो न तो खुद अपने को पा सकी है और न किसी विद्यार्थी के पास जा सकी है!

कहते हैं कि शिक्षा जिज्ञासा जगाती है। सवाल करना सिखाती है। अपने जीवन के सच को खोजने और उसे जान लेने का कौशल प्रदान करती है। निरन्तर अन्वेषित करते रहने और रचते रहने की शक्ति भी देती है। कहा तो यह भी जाता है कि सवाल करना और निरन्तर रचते रहना ही शिक्षा का सार है। अब हम अपने से पूछें कि क्या शिक्षा ऐसा कर रही है ? सवालों पर ताले जड़ने वाली और प्रश्न-पत्रों को पुलिस थाने में सुरक्षित करने वाली शिक्षा भला कौन से सवाल करना सिखाएगी और कैसी जिज्ञासा जगाएगी ?

कहा तो यह भी जाता है कि शिक्षा सह-जीवन सिखाती है। प्रेम करना सिखाती है। करुणा उपजाती है। बालको को विनय देती है और विवेकवान बनाती है। भाईचारा पनपाते हुए वह दूसरों के दर्द में काम आना सिखाती है। जो कहा जा रहा है वह भी सच है मगर पग-पग पर प्रतियोगिताएं कराने वाली शिक्षा कैसा सह-जीवन सिखाएगी ? कैसे सिखाएगी ? अब बताइए इस शिक्षा के सच को हम कहां तलाशें ? ❑ **रमेश थानवी**
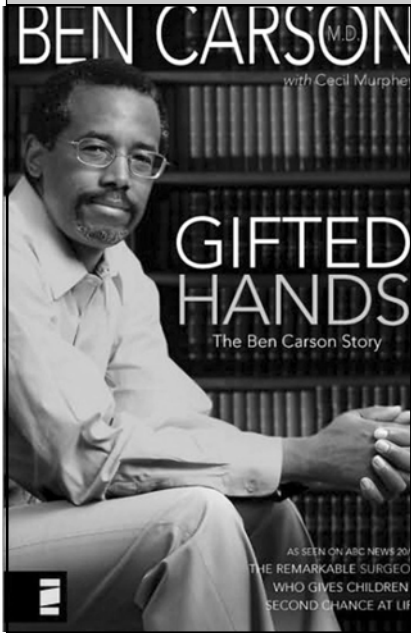
बेन कार्सन

❑

अपर्णा मक्कड़

पिता से वंचित, निर्धन, अश्वेत बालक। नाम बैंजामिन कार्सन। बच्चे की हकीकत खुरदुरी ही नहीं, ऊसर भी थी। पढ़-लिख पाने की संभावनाएं न के बराबर। किन्तु निर्धन मां सोन्या कार्सन ने अपने पुत्र के हृदय में संकल्प का एक बीज बोया। विश्वास और अनुशासन के जल से वे उस अंकुर को सींचती रहीं और बिरवा लहलहा उठा। बैंजामिन को आज विश्व डॉ. बेन कार्सन के नाम से जानता है। जिन्होंने शिशु न्यूरोसर्जरी में अद्‌भुत साहसिक प्रयोग किये। असाध्य रोगों से जूझ रहे बच्चों को बचाने के लिए उन्होंने ऐसा कौशल प्रस्तुत किया कि अंतर्राष्ट्रीय चिकित्सा जगत ने दांतों तले उंगली दबा ली।

जब वे छोटे थे, रुढ़िवादी समाज की ऊंची दीवारों से टकराकर लौटी एक प्रतिध्वनि उन्हें सुनाई देती थी- तुम हीन ही, तुम अश्वेत हो। हिकारत का वह विष उनके कंठ तक उतरा किन्तु भीतर न जा पाया। डॉ. बैन कार्सन ने पीयर रिव्यूड जर्नल्स से १२० शोध-पत्र लिखे, ३० पुस्तकें और पुस्तकों के अध्याय लिखे। वे अमरीका के सर्वोच्च नागरिक सम्मान से नवाज़े गये। ५० से अधिक मानद डाक्टरेट एवं अन्य बहुत से प्रतिष्ठित पुरस्कार...।

वे मन-प्राण से नन्हें मरीज़ों की जीवन की लौ को प्रदीप्त कर रहे हैं। उनकी आंखों और हाथों में असाधारण समन्वय है जिससे वे असंभव पीडियट्रिक न्यूरोसर्जरी भी कर पाते हैं। डॉ. कार्सन अपने इस कौशल को ईश्वरीय देन मानते हैं। उनकी आत्मकथा का शीर्षक भी है - 'गिफ्टेड हैंड्स'। आपके लिए हिंदी में प्रस्तुत है यह अनन्य कथा जो गाथा बन गयी है । अपर्णा ने यह काम विशेष रूप से अनौपचारिक के लिए किया है। ❑ सं.

बचपन के वो सुनहले दिन। बड़े दिन पर मिली ढेरों सौगातें। पिता हमसे दूर जा चुके थे किन्तु मां की छत्र-छाया में बेफिक्री का आलम था। तब मैं आठ साल का था। अपने सभी उपहारों में मुझे सबसे प्रिय था-कैमिस्ट्री सैट। मैं घंटों उससे खेलता, निर्देश पढ़ता और एक के बाद एक प्रयोग करता जाता। लिटमस पेपर को लाल और नीला करता। रसायनों के अटपटे मिश्रण बनाता और फिर उन्हें रंग बदलते, झाग उठते, हल्की आवाज़ करते देखता। कभी किसी प्रयोग से जब पूरा घर सड़े हुए अंडे या उससे भी बुरी गंध से भर जाता तो मैं हंस-हंस कर लोट-पोट हो जाता।

डैट्रायट के चर्च में एक शनिवार सुबह भीना अहसास ले कर आयी। पादरी महोदय ने सुदूर इलाकों में सेवा कर रहे एक मिशनरी डॉक्टर दंपत्ति की कहानी सुनाई कि कैसे संकट के समय प्रभु ने उनकी रक्षा की । मेरे कोमल मन पर ऐसे परम पिता का स्वरूप उभरा जो अपने सेवकों की मदद के लिये तत्पर हैं। हृदय विचारों से आप्लावित था-क्यों न मैं भी ईश्वर की छॉह में जाऊं। मैं उनकी करुणा का आकांक्षी था और उस दिन चर्च में सिखायी गयी बातों पर अगले चार सालों तक अमल करने की कोशिश करता रहा ।

उस मीठी सुबह मन ने एक निश्चय किया- मैं डाक्टर बनूंगा । डॉक्टर्स की शारीरिक कष्ट हर लेने की क्षमता मेरे मन-मस्तिष्क को छूती थी। चर्च से घर लौटते हुए मैंने मां से कहा, मैं डॉक्टर बनना चाहता हूं। ''क्या मैं डॉक्टर बन सकता हूं, मां ?''

मेरे स्कूल में श्वेत छात्रों की बहुलता थी । मैं पांचवीं में था, अपनी कक्षा का सबसे फिसड्डी छात्र । सफलता के क्षितिज को ताकता एक पितृविहीन, निर्धन बालक। मैं खुद को अंधियारी कोठरी में पाता। हर विषय में टैस्ट का परिणाम आता और विफलता की बारिश में मन पर हौसले का छप्पर चूने लगता । सहपाठियों की फब्तियां हृदय को बींध देती।

राष्ट्रपति बुश ने नवाजा राष्ट्र के सर्वोच्च सम्मान से

मां ने रुक कर मेरे कंधे पर हाथ रखा **'बेटे, अगर तुम ईश्वर से प्रार्थना करो और विश्वास रखो कि वे मदद करेंगे तो वे अवश्य करेंगे।'**

'मुझे भरोसा है कि मैं डाक्टर बन सकता हूं।'

'बेटे, तुम जरुर डॉक्टर बनोगे।' मां ने दृढ़ता से कहा और हम घर को चलने लगे। मां के आश्वस्त कर देने के बाद अपने जीवन-लक्ष्य के बारे में मुझे कभी संदेह न हुआ।

मां दरकते वैवाहिक जीवन की गहन वेदना से गुजर रही थीं। वे महज तीसरी कक्षा पास थीं और समृद्ध घरों में सहायिका की नौकरी करती थीं। कैसा भी घरेलू कार्य हो, वे उसे तत्परता से सीखने की कोशिश करतीं। अथक परिश्रम से अर्जित धन की वे पाई-पाई जोड़ती थीं। वे प्रतिष्ठित जनों के तौर-तरीकों को गौर से देखती और अपने दोनों बालकों को समझातीं कि सफल लोगों की विचार-प्रक्रिया कैसे है, आचरण कैसा है?

मेरे स्कूल में श्वेत छात्रों की बहुलता थी । मैं पांचवीं में था, अपनी कक्षा का सबसे फिसड्डी छात्र । सफलता के क्षितिज को ताकता एक पितृविहीन, निर्धन बालक। मैं खुद को अंधियारी कोठरी में पाता। हर विषय में टैस्ट का परिणाम आता और विफलता की बारिश में मन पर हौसले का छप्पर चूने लगता । सहपाठियों की फब्तियां हृदय को बींध देती। मैं एकटक शून्य को देखता रहता- बाहर कॉपी पर लिखा शून्य अंतर्मन में पसरे शून्य में एकाकार हो जाता।

स्कूल में बच्चों के लिये नेत्र-विशेषज्ञ आये। उनकी जांच में पता चला कि मेरी नेत्र-ज्योति कदापि ठीक न थी। मुझे चश्मा लगा और पहली बार मैं पिछले सीट पर बैठकर चॉक बोर्ड पर लिखा अच्छे से पढ़ पाया। अब मैं क्लास में कुछ सीख पा रहा था और परीक्षा-परिणाम इसका गवाह थे। मेरी टीचर ने भी बुलाकर मुझे शाबाशी दी। मुझे 'एफ' (फेल) की बजाय 'डी' ग्रेड मिला था। झूठी सफलता हौले से मुस्कुरा दी। किन्तु मां की तुला पर यह उपलब्धि मामूली थी। उन्हें हमें और बच्चों सा बनाने की चाह न थी। वे हमें अपने आप से कंपीट करना सीखा रही थीं। एक शाम उन्होंने मुझसे कहा कि मुझे स्कूल से घर आकर खेलने की बजाय गणित के पहाड़े याद करने होंगे। मेरी बाल-बुद्धि ने बहुत प्रतिरोध किया किन्तु एक न चली। मां की अनुपस्थिति में उनके आदेश की अवज्ञा मैं कदापि न कर सकता था। मां शाम को घर आकर मेरी प्रगति देखती, हौसला बढ़ाती और मैं मनोयोग से और पहाड़े याद करने में जुट जाता। कुछ ही दिनों में

मुझे गणित सरल लगने लगी और गणित में अंक क्लास के श्रेष्ठ बच्चों के स्तर तक जा पहुंचें । मेरी खुशी का ठिकाना न था।

स्कूल जाना खूब भाने लगा। अब कोई मेरी खिल्ली नहीं उड़ाता था। मां चाहती थी कि मैं सफलता से आश्वस्त तो होऊं किन्तु संतुष्ट नहीं। उनका सपना था कि मैं हर विषय में उत्कृष्ट प्रदर्शन करूं। मुझे भी लक्ष्य जंचा लेकिन बाल-मन को मां का अनुशासन खला। मां ने हम दोनों के टी.वी. देखने पर पाबंदी लगा दी। एक सप्ताह में बस तीन कार्यक्रम देखने की इजाजत दी गई। मैं रुआंसा हो गया... अपने प्रिय टी.वी. प्रोग्राम्स से वंचित जो होने जा रहा था। मां टस से मस न हुईं। उनका अगला आदेश और भी दुष्कर था। हम दोनों को लाइब्रेरी जाकर पुस्तकें देखनी थीं और हर सप्ताह दो-दो पुस्तकें पढ़ कर उन की लिखित रिपोर्ट मां को देनी थी।

दो किताबें ? अभी तक हमने स्कूल में पढ़ाई जाने वाली किताबों के अतिरिक्त कोई और किताब नहीं पढ़ी थी। मुझे विश्वास नहीं था कि सप्ताह में एक पुस्तक भी मैं पढ़ पाऊंगा। खैर.. मन मारकर हम लाइब्रेरी जाने लगे। हम उनकी अवज्ञा करें, यह हमारे लिये अकल्पनीय था। वे हमारी मां थीं-पूजनीया, प्यारी मां।

वे बार-बार कहतीं, 'पढ़ कर तुम ज्ञान अर्जन कर सकते हो। संसार में अवसर उन्हें मिलते हैं जो पढ़ सकते हैं। मेरे बेटे जीवन में अवश्य सफल होंगे क्योंकि वे अपने स्कूल के सर्वश्रेष्ठ बाल-पाठक बनने वाले हैं। मां को हम दोनों पर अटूट विश्वास था और हम उनकी अवहेलना कैसे कर सकते थे ! उनके विश्वास से मेरा हृदय भी आलोकित हो उठा।

मां के कई मित्रों परिचितों ने उन्हें आड़े हाथों लिया। उन्हें आशंका थी कि पढ़ाई के लिये विवश किये जाने पर हम

सातवीं कक्षा में मैं प्रथम था और उसी वर्ष नवीं कक्षा में मेरे बड़े भैया भी प्रथम थे। अगले साल आठवीं का परिणाम भी बिल्कुल ऐसा ही रहा। स्कूल की असैंबली में मेरी एक शिक्षिका ने मुझे मैरिट प्रमाण-पत्र दिया। अचानक उन्होंने ऊंची आवाज में श्वेत छात्रों को लताड़ा कि उन बालकों ने कैसे एक अश्वेत विद्यार्थी को अपने से आगे निकल जाने दिया? उनके संबोधन का मर्म स्पष्ट था-श्वेत छात्रों को ही यह हक है कि वे क्लास में अव्वल हों।

दोनों मां के इस निर्णय को मन ही मन सख्त नापसंद करेंगे।

'वे भले ही मुझे नापसंद करें, पर उन्हें शिक्षित होने का अवसर भी तो मिलेगा।, मां दृढ़ता से उत्तर देतीं।

कड़ा अनुशासन यद्यपि मुझे खलता था किन्तु मां के प्रति नाराजगी नहीं थी। वे बाल-मन को पोषित करना खूब जानती थीं। लगभग हर रोज वे मुझसे कहतीं, बेटे, तुम जो करने का संकल्प करोगे, वही तुम बन सकते हो।'

मुझे प्रकृति, विज्ञान और जंतुओं से प्यार था इसलिये मैंने लाइब्रेरी से इन पहलुओं पर किताबें चुनीं। यूं पांचवीं कक्षा में मैं सभी विषयों में मंदबुद्धि छात्र था किन्तु साइंस से मैंने कमाल कर दिखाया। मेरे विज्ञान शिक्षक ने मेरी अभिरुचि को समझा और उन्होंने मेरे लिये खास प्रोजैक्ट्स तैयार किये। वे चाहते थे कि मैं सहपाठियों में चट्टानों, जंतुओं और मछलियों की पहचान विकसित करूं। मैं मछली की त्वाचा पर चिन्हों से उसकी प्रजाति बता सकता था। ऐसा कौशल क्लास में किसी और के पास न था। मैं अब एक नये मुकाम पर था।

लाइब्रेरी जाना जारी रहा और विज्ञान पर मेरी पकड़ मजबूत होती गई। पांचवीं कक्षा की समाप्ति तक मैं राह की किसी भी चट्टान को पहचानने लगा था। मैंने जलीय जीवन पर काफी अध्ययन किया था। अब मैं जल धाराओं के पास जाता और नन्हें जीवों को तलाशता। अपने विज्ञान शिक्षक के माइक्रोस्कोप तले जल के नमूने रखता और उसमें धड़क रहे जीवन के स्पंदन को अनुभव करता।

धीरे-धीरे मुझे अहसास हुआ कि मैं स्कूल में सभी विषयों में बेहतर होता जा रहा हूं। अब लाइब्रेरी जाने की ललक थी। वहां का स्टाफ हम दोनों भाइयों को खूब पहचानने लगा था। वे लोग हमें नयी पुस्तकों के बारे में उत्साह से बतातें । चेतना का फलक अब व्यापक था-मैं एडवेंचर और वैज्ञानिक खोजों के बारे में पढ़ रहा था। इस अध्यवसाय से मेरी समझ तो गहरी हुई ही, मेरे शब्द-ज्ञान में भी इजाफा होने लगा। स्कूल में होने वाले स्पैलिंग टैस्ट मेरी दुखती रग थे। मैं पहले ही शब्द से गलतियों का शुभारंभ कर देता था। किन्तु पांचवीं कक्षा के अंतिम सप्ताह तक में आलोक की एक किरण कौंधी। हमारी शिक्षिका ने स्पैलिंग का एक लंबा इम्तहान लिया जिसमें हमें साल भर में सीखे सभी शब्दों का पुन: अभ्यास करना था। जैसीआशा थी, हमारे सहपाठी बॉब फॉर्मर ने वह प्रतियोगिता जीत ली। अंतिम शब्द था-'एग्रीकल्चर।' यह

शब्द तो मैं जानता हूं, उल्लास की एक लहर मेरे शरीर में दौड़ गई। एक दिन पहले ही लाइब्रेरी से लाई किताब से मैंने यह शब्द सीखा था। सीखने की इच्छा को पंख लग गये। मै हर शब्द की स्पैलिंग सीख सकता हूं। निश्चय ही मैं बॉबी लर्नर से अधिक महारत हासिल कर सकता हूं।

मैं बॉबी के ज्ञान से प्रभावित था। एक दिन इतिहास की क्लास में टीचर ने फ्लैक्स का जिक्र किया। हम सभी छात्र इस शब्द से अनजान थे। बॉबी, तब स्कूल में नया था। उसने उत्तर देने के लिये हाथ खड़ा किया और हमें बताया कि फ्लैक्स कहां ओर कैसे उगाया जाता है, कैसे महिलायें इसके रेशे से लिनेन बनाती हैं। मन पर यह वाकया अंकित था और साथ ही अंकित था बॉबी के एक ऊंचाई पर होने का अहसास। अचानक एक विचार ने विद्युत गति से आकर मन पर दस्तक दी। मैं पुस्तकों से फ्लैक्स अथवा किसी भी विषय पर सीख सकता हूं। मां कहती हैं न, 'अगर आप पढ़ते हैं तो आप कुछ भी नया सीख सकते हैं।' मैं तमाम गर्मियां पढ़ता रहा और छठे दर्जे में आने पर मुझे अनेक शब्दों की स्पैलिंग अनायास याद रहने लगी।

क्लास में अब सहपाठी मुझे सम्मान की दृष्टि से देखते थे। पढ़ने और स्वयं को तराशने में मग्न हो चुका था मैं। सातवीं कक्षा में मैं प्रथम था और उसी वर्ष नवीं कक्षा में मेरे बड़े भैया भी प्रथम थे। अगले साल आठवीं का परिणाम भी बिल्कुल ऐसा ही रहा। स्कूल की असैंबली में मेरी एक शिक्षिका ने मुझे मैरिट प्रमाण-पत्र दिया। अचानक उन्होंने ऊंची आवाज में श्वेत छात्रों को लताड़ा कि उन बालकों ने कैसे एक अश्वेत विद्यार्थी को अपने से आगे निकल जाने दिया? उनके संबोधन का मर्म स्पष्ट था-श्वेत छात्रों को ही यह हक है कि वे क्लास में अव्वल हों।

मैं आहत विस्मय से अपनी शिक्षिका को सुन रहा था। इस मुकाम तक आने के लिये जी-तोड़ परिश्रम किया था मैंने। औरों से कहीं अधिक। और आज केवल त्वचा के रंग की वजह से मेरी प्रतिभा को नकारा जा रहा था। इन शिक्षिका महोदया ने मुझे पढ़ाया है और वे बखूबी जानती हैं कि मैंने सतत श्रम से यह गौरव अर्जित किया है फिर वे ऐसी कठोर बातें क्यों कह रही हैं ? क्या वे नहीं मानती कि सभी मनुष्य समान है... कि उनकी त्वचा या उनकी प्रजाति से उनकी क्षमताओं को तय नहीं किया जा सकता।

मेरे कई श्वेत सहपाठी शिक्षिका के संबोधन के दौरान लज्जित थे। वे बच्चे जो तीन वर्ष पहले मेरा मजाक उड़ाते थे, अब मेरे अच्छे मित्र बन चुके थे। टीचर के व्यवहार के प्रति क्षोभ उनके चेहरों पर स्पष्ट था।

मैं मन ही मन संकल्प कर रहा था कि स्वयं को प्रमाणित करके ही दम लूंगा।❑

अगले अंक में जारी....

प्रस्तुति - अपर्णा मक्कड़
१२४, आनंद नगर
मिलन होटल के
पास, सिरसी रोड,
जयपुर-३०२०१२

आओ तलाशें

❑

संतोषकुमार तिवारी

आओ तलासें उन्हें
जिन्होंने पहले-पहल
रास्ते के दोनों तरफ
बिरवे लगाए
अब वहां घने
छायादार पेड़ हैं।

नदियों से पानी
उधार लेकर
जिसने बनायीं नहरें
और क्यारी-क्यारी की प्यास बुझाई
फिर क्या,
दाना-दाना अमृत तत्त्व से
भर गया।

आओ साथियों
इन मार्गों गुज़रते वक्त
दशरथ माझी को
नमन करें
पत्थरों का सीना चीर
जिन्होंने हमें रास्ता दिया

आओ तो सही
तलाश करके ही रुकेंगे उन्हें
जिनकी छैनी और हथोड़ी ने
पत्थरों में जान डाल दी
और
ईश्वर बन गए पत्थर।❑

हिन्दी विभाग, राजकीय इन्टर कॉलेज,
ढिकुली (रामनगर),
जिला-नैनीताल-२४४७१५
(उत्तराखंड)

जीवन और शिक्षा की सरगम

❑

नारायण भाई देसाई

जीवन की प्रत्येक गतिविधि शिक्षा का उपकरण बन सकती है। गुजरात विद्यापीठ की स्थापना करते समय महात्मा गांधी ने जो सपना देखा था उस पर समय के साथ खरे उतरने का प्रयास लगातार जारी है। नारायण देसाई का कुलपति के नाते दिया गया यह संबोधन भारत में शिक्षा के स्वरूप और औचित्य को हमारे सामने स्पष्ट करता है। उनका मानना है कि शिक्षा एक तरफा आदान नहीं है यानि सिर्फ शिक्षक से विद्यार्थी को ही हस्तांतरित नहीं होती। यह परस्पर विकास का जरिया भी है।❑ सं.

कृष्ण और सुदामा गुरु सांदीपनी के यहां पढ़ने गये थे। कृष्ण ने ऐसे काम किये कि गुरु उनके नाम से पहचाने गये। छात्रों को चाहिए कि वे भी ऐसे कार्य करें जिससे गांधी विद्यापीठ और हमारी पहचान हो। शिक्षा कोई एकमार्गी रास्ता नहीं है। विद्यापीठ से यदि केवल विद्यार्थी ही शिक्षा लेकर जाते हैं और बाकी जो जहां थे वहीं के वहीं रहें, तब समझना चाहिए कि हमारी शिक्षा में बड़ी खोट है। विद्यार्थी के साथ विद्यापीठ को भी समाज में आगे बढ़ना ही है। यदि ऐसा नहीं हो तो हमारी विद्या सिकुड़ जाती है। हम आपको जैसा देखना चाहते हैं आप वैसा या उससे भी अधिक बढ़िया बनें। हम आपको तोते की तरह रटा हुआ ज्ञान देना नहीं चाहते। हममें लगातार विद्या का संचार होना चाहिए।

दीक्षित होकर जाने वाले विद्यार्थी से कुलपति यह अपेक्षा रखते हैं कि विद्यार्थियों की जिज्ञासा, होशियारी और सामर्थ्य में वृद्धि हुई हो, समग्र विद्यापीठ का वातावरण व उसके ध्येय उपरोक्त दिशा में आगे बढ़ते हों एवं अध्यापकों की रुचि, परिश्रम और अनुभवों में वृद्धि हुई हो। मेरी यह अभिलाषा आप सबका संकल्प क्यों बने ? यह भी विचारणीय है। विद्यापीठ को इस दिशा में अग्रसर होने के लिए ज्ञान की तीन धाराओं का अनुसरण करना पड़ेगा :

१. दुनिया के विद्यापीठों में सामान्यत: दी जाने वाली शिक्षा की धारा, जिसे हम प्रचलित धारा कहें।

२. आज तक विशेषत: हमारे देश ने और कुछ अंश तक सारी मानव जाति ने जिस विद्या का संचय किया है और जिसको गहराई तक ले जाया गया है, वह सांस्कृतिक धारा कही जायेगी।

३. समग्र समाज ने अपने अनुभव

से, जीवन के विविध क्षेत्रों में विकसित विद्या, जिसे हम लोकविद्या धारा कह सकते हैं।

विद्यापीठ को इनधाराओं का विचार करते समय शायद सबसे पहले यह समझकर चलना पड़ेगा कि अभी बहुत कुछ किया जाना बाकी है। एक उर्दू कवि ने कहा है-

हम जानते थे इल्म से कुछ जानेंगे,
जाना तो यह जाना कि न जाना कुछ भी।

मुख्यधारा भी कम विशाल नहीं है। विज्ञान एवं समाज विज्ञान, तकनीकी आदि इतनी गतिशीलता से आगे बढ़ रहे हैं कि हमारे विद्यार्थी सारा ज्ञान अपने दिमाग में भर लें ऐसी अपेक्षा रखना अव्यवहार्य है और इसकी जरूरत भी नहीं है। हमें करना तो यह पड़ेगा कि हमारे विद्यार्थी नयी-नयी परम्पराएं खड़ी करें। मस्तिष्क में जानकारी के पहाड़ भरना ही अब विद्यार्थी की योग्यता नहीं रहा है। विद्यापीठ को खुद को भी उन सरहदों पर घूमना होगा और नई-नई परम्पराएं शुरु करनी होगी। हमें अपनी शोध को मानव के लिए कल्याणकारी बनाना होगा।

संस्कृति की धारा के विषय में हम भारतीय भाग्यवान हैं। भारत भूमि को मानवजाति के रचे हुए सबसे प्राचीन ग्रंथ (वेद) मिले हैं। इतना ही नहीं उसके अध्ययन की धारा भी कमोबेशी अविरल रही है। भारत की संस्कृति की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह सर्वसमावेशक है। संस्कृति की गहराई को जांचते रहने का कार्य भी विद्यापीठ को करना चाहिए। उसका विश्लेषण करना भी विद्यापीठ का काम है। समाज में धर्मो का मिलन, संप्रदायों की विशेषताएं और मर्यादाएं, आश्रम व्यवस्था में आयी हुई शिथिलता व अधोगति के अन्य कारणों को जानने की जरुरत है। ऐसे अनेक सवालों पर विद्यापीठ में वैज्ञानिक एवं तटस्थ भाव से विचार करना होगा। दूसरी ओर साहित्य, संगीत कला के क्षेत्र के उतार चढ़ाव और आधुनिक एवं अति-आधुनिक संपर्कों का प्रभाव भी उसका विषय होगा। संस्कृत भाषा, काव्य नाटक, व्याकरण आदि के अभ्यास के साथ ही मध्यकालीन संतों द्वारा हमारे समाज को सौंपी हुई थाती का अभ्यास भी करना होगा।

लोकधारा के बारे में सोचते हुए मुझे कई बार लगता है कि हमारी हालत 'पानी में मीन पियासी' जैसा नहीं, बल्कि उस पानी जैसी है जो तेजी से भाप बनकर उड़ जाता है। आजकल हम कृषि, गौशाला, वस्त्रविद्या आदि कुछ उद्योगों के साथ जुड़े हुए हैं। उनके संबंध में विस्तृत विवेचना की आवश्यकता है व इसके विशाल शब्दकोष से हमें तारतम्य बनाना होगा। वेड़छी में दस साल का एक लड़का जिसका शाला में जाने का मन नहीं करता था, से मैंने आसपास के घास के कुछ तिनके लाने के लिए कहा। लड़का अलग-अलग २८ प्रकार की घास ले आया और वह चौधरी बोली में उन सभी के नाम भी जानता था।

लोकधारा के बारे में सोचते हुए मुझे कई बार लगता है कि हमारी हालत 'पानी में मीन पियासी' जैसा नहीं, बल्कि उस पानी जैसी है जो तेजी से भाप बनकर उड़ जाता है। आजकल हम कृषि, गौशाला, वस्त्रविद्या आदि कुछ उद्योगों के साथ जुड़े हुए हैं। उनके संबंध में विस्तृत विवेचना की आवश्यकता है व इसके विशाल शब्दकोष से हमें तारतम्य बनाना होगा। वेड़छी में दस साल का एक लड़का जिसका शाला में जाने का मन नहीं करता था, से मैंने आसपास के घास के कुछ तिनके लाने के लिए कहा। लड़का अलग-अलग २८ प्रकार की घास ले आया और वह चौधरी बोली में उन सभी के नाम भी जानता था। मोझादा में सतपुड़ा के अंतिम छोर पर आए हुए डुंगर से वर्षा ऋतु में पानी प्रतिवर्ष हजारों टन मिट्टी घसीटकर ले जाता था। उसे रोकने के लिये बांध बांधने वाले किशोरों को इंजीनियरिंग की कोई पदवी की जरुरत नहीं पड़ी थी। भारत की गृहिणियां जितनी तरह का भोजन पकाना जानती हैं उतनी दुनिया के दूसरे कोई देश की बहनें शायद और न जानती हों। पाकशास्त्र में उपयोग में लिए जाने वाले सैकड़ों परिभाषिक शब्द क्या हमारे ध्यान में भी आते हैं ? किसान खेत में हल चलाने से लेकर फसल को घर पहुंचाता है तब तक की प्रक्रियाओं के दौरान कितनी क्रियाओं से गुजरता है, उसके पीछे क्या विज्ञान है, उसमें क्या कमीवेशी हो सकती है, समस्त देश की कृषि की मजदूरी के कार्य में लगी हमारी बहनें, जिनकी संख्या खेत मजदूरों की ७० प्रतिशत जितनी है, उनके श्रम को कम करने के लिए और ज्यादा उत्पादक बनाने के लिए हमारी विद्यापीठ ने क्या कोई प्रयास किये हैं ?

आयुर्वेद का क्षेत्र तो किसी भी विद्यार्थी को आकर्षित कर सकता है और कई लोगों का तो यह पूरे जीवन का मिशन भी बन सकता है। विद्यापीठ के लिए लोकविद्या केवल आकर्षण ही नहीं अध्ययन का, संशोधन का, चुनौती का और सुखद परिश्रम का विषय बनना चाहिए। मैंने तो केवल कुछ की ओर ही इंगित किया है।

समस्त विद्यापीठ परिवार में जितनी परस्पर प्रीति होगी, हमारे पूरे वातावरण में जितनी मुक्ति होगी हमारी और आपकी साझा अभिलाषाओं को उतनी ही ठोस अभिव्यक्ति मिलेगी और वह हमारे सबका आनंद का विषय बनेगी।

हमारी विद्यापीठ, त्रिविध विद्याधाराओं की संगम बनी रहे, पर विशेष करके हमारे सभी छोटे-बड़े, अध्यापक, गुरुपति एवं शिक्षण कार्य से जुड़े सभी का पुरुषार्थ का विषय बने। इस कार्य को सिद्ध करने के लिए हमारे लक्ष्य के पीछे रहे मूल्यों का विचार पहले करना पड़ेगा और सतत उसका ही चिंतन करना होगा। ये मूल्य हैं-नई दृष्टि, क्षितिज विस्तार, गतिशीलता, मुक्ति का वातावरण और पारस्परिकता।

विद्यापीठ के प्रत्येक अंग का अपना एक अलग किन्तु दूसरे अंगों का पूरक व्यक्तित्व विकसित होना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति को अपने ज्ञान व कर्म की अभिव्यक्ति मिले ऐसा अवसर प्राप्त होना चाहिए। इसके लिए साथ मिलकर उचित कार्यक्रम बनायें और स्वस्थ परम्पराएं खड़ी करें।

हमारे संस्थापक और आद्य कुलपति (महात्मा गांधी) ने हमें सिखाया है कि उत्तम प्रशिक्षण आचरण के द्वारा ही प्राप्त हो सकता है। उन्होंने ऐसा कहकर मानों हमारी सारी संस्कृति का साराबोध ही हमारे सामने रख दिया है। इन सबके लिए हमें प्रचंड पुरुषार्थ, अनथक परिश्रम और साधना करनी पड़ेगी। इस साधना में हमें एक बात और ध्यान में रखनी पड़ेगी कि उसके पीछे परिश्रम हो, दिखावा नहीं। वह सहजता से बिखरे, अनुकरण से नहीं। ❑

सप्रेस से साभार
(गुजरात विद्यापीठ के ५८ वें पदवीदान समारोह में कुलपति बतौर दिये गये वक्तव्य का सारांश)

शिक्षा ने कहा

❑
आचार्य काका कालेलकर

'मैं सत्ता की दासी नहीं हूं, कानून की किंकरी नहीं हूं, विज्ञान की सखी नहीं हूं, अर्थशास्त्र की बांदी नहीं हूं। मैं तो धर्म का पुनरागमन हूं। मनुष्य की बुद्धि, हृदय एवं सर्व इन्द्रियों की स्वामिनी हूं। मानस शास्त्र और समाज शास्त्र मेरे दो चरण हैं। कला और कारीगरी मेरे हाथ हैं। विज्ञान मेरा मस्तिष्क है, धर्म मेरा हृदय है। निरीक्षण और तर्क मेरी आंखें हैं। इतिहास मेरे कान हैं। स्वातंत्र्य मेरा श्वास है। उत्साह और उद्योग मेरे फेफड़े हैं। धैर्य मेरा व्रत है। श्रद्धा मेरा चैतन्य है। ऐसी मैं जगदम्बा हूं। जगद्धात्री हूं। मेरा उपासक कभी किसी का मोहताज नहीं रहेगा। उसकी सभी कामनाएं मेरी कृपा से तृप्त हो जायेंगी।' ❑

इन्क़लाब का गीत

❑
गोरख पाण्डेय

हमारी ख्वाहिशों का नाम इन्क़लाब है !
हमारी ख्वाहिशों का सर्वनाम इन्क़लाब है !
हमारी कोशिशों का एक नाम इन्क़लाब है !
हमारा आज एक मात्र काम इन्क़लाब है !

ख़तम हो लूट किस तरह जवाब इन्क़लाब है !
ख़तम हो भूख किस तरह जवाब इन्क़लाब है !
ख़तम हो किस तरह सितम जवाब इन्क़लाब है !
हमारे हर सवाल का जवाब इन्क़लाब है !

सभी पुरानी ताकतों का नाश इन्क़लाब है !
सभी विनाशकारियों का नाश इन्क़लाब है !
हरेक नवीन सृष्टि का विकास इन्क़लाब है !
विनाश इन्क़लाब है, विकास इन्क़लाब है !

सुनो कि हम दबे हुओं की आह इन्क़लाब है,
खुलो कि मुक्ति की खुली निग़ाह इन्क़लाब है,
उठो कि हम गिरे हुओं की राह इन्क़लाब है,
चलो, बढ़े चलो युग प्रवाह इन्क़लाब है ।

हमारी ख्वाहिशों का नाम इन्क़लाब है !
हमारी ख्वाहिशों का सर्वनाम इन्क़लाब है !
हमारी कोशिशों का एक नाम इन्क़लाब है !
हमारा आज एक मात्र काम इन्क़लाब है !❑

लोकतंत्र में लोक

❑

वसीम अक़रम

तुम अनाज उगाओगे
तुम्हें रोटी नहीं मिलेगी,
तुम ईंट पत्थर जोड़ोगे
तुम्हें सड़क पर सोना होगा,
तुम कपड़े बुनोगे

और तुम नंगे रहोगे,
क्योंकि अब लोकतंत्र
अपनी परिभाषा बदल चुका है
लोकतंत्र में अब लोक
एक कोरी अवधारणा मात्र है,
सत्ता तुम्हारे नहीं
पूंजी के हाथ में है
और पूंजी
नीराओं, राजाओ
कलमाड़ियों और टाटाओ के हाथ में
है,
तुम्हारी ज़बान, तुम्हारी मेहनत
तुम्हारी स्वतंत्रता, तुम्हारा अधिकार
सिर्फ संवैधानिक कागज़ों में है
हक़ीक़त में नहीं,
तभी तो
तुम्हारी चंद रुपये की चोरी
तुम्हें जेल पहुंचा देती है
मगर
उनकी अरबों की हेराफेरी
महज एक
राजनीतिक खेल बनकर रह जाती है। ❑

नाटक से बदलाव

❑
अशोक राही

नाटक सामाजिक बदलाव की एक शैक्षिक विधा है। नाटक से जो सम्प्रेषित होता है वह सीधा दर्शकों के गले उतरता है और उनको सोचने को विवश करता है। नाटक का कथ्य समाज का अपना सच होता है और अपने सच को मंच पर घटित होता देख दर्शक विस्मित होता है और बदलने को विवश होता है। प्रस्तुत है राजस्थान के सुप्रसिद्ध रंगकर्मी एवं रचनारत साहित्यकार अशोक राही की कलम से एक विवेचन । ❑ सं.

जॉर्ज बर्नाड शॉ ने कहा था - थियेटर वह विधा है जो निर्बल को बल, डरे को साहस और जीवन को आत्मविश्वास देती है।' शॉ का कथन यह सिद्ध करने के लिए पर्याप्त है कि नाटक भी सामाजिक परिवर्तन में अपनी भूमिका निभा सकता है बशर्ते कि उसका उपयोग एक सधे हुए हथियार के रूप में किया जाये। दरअसल 'नाटक' दो विपरीत चीजों के टकराव से उत्पन्न होता है। दो विचार, दो भाव, दो व्यक्तित्व। हमारी पारम्परिक कथा-कहानियों में नायक और खलनायक एक दूजे से टकराते हैं। रामलीला अपने देश में सैकड़ों वर्ष से चल रही है और आज जबकि मनोरंजन के एक से एक बढ़कर एक साधन मौजूद हैं, रामलीला के दर्शकों की संख्या लाखों में है। ये दर्शक अपनी आस्था के कारण रामलीला देखने जाते हैं लेकिन वहां के प्रस्तुतिकरण में इसलिए रम जाते हैं क्योंकि मंच पर अच्छे और बुरे का द्वंद्व उन्हें देखने को मिलता है। राम-रावण में टकराव तो जगजाहिर है लेकिन उन्हें दशरथ-कैकेयी, लक्ष्मण-परशुराम, बाली-सुग्रीव, रावण-मंदोदरी, रावण-मारीच के चरित्रों के मध्य भी टकराव देखने को मिलता है। और वहां उन्हें सदैव अच्छाई की जीत होती नज़र आती है। नाटक के दृश्यों, संवादों और अभिनेता-अभिनेत्रियों के अभिनय में दर्शग अपने को एकाकार कर लेता है उस वक्त जो भाव अभिनेता के हृदय में चल रहे होते हैं वही भाव दर्शक के मन में उत्पन्न हो जाते हैं। यही कारण है कि दर्शक रंगमंच के पात्रों की नाट्यस्थितियों के अनुरूप आचरण करता है। वे दुखी हैं और रो रहे हैं तो दर्शक की आंखें भी भीगने लगती हैं। नाटक की रची शक्ति का प्रयोग आज़ादी से पूर्व 'इप्टा'-भारतीय जन नाट्य संघ ने किया था। उस वक्त जागरूक कलाकारों ने जगह-जगह अपने नाटकों के प्रदर्शन किये, हजारों लोगों ने उन्हें देखा और उनके मन में स्वतंत्रता के प्रति ललक जागी। चूंकि 'इप्टा' के सामने उस वक्त एक बड़ा उद्देश्य था और तब तक वह संगठन उस उद्देश्य में जुटा रहा तब तक इप्टा भी विस्तार पाती रही और आज़ादी के बाद वही महान संगठन सिमटता चला गया। इससे ज़ाहिर होता है कि आम दर्शक भी सामाजिक परिवर्तन के उद्देश्यों को लेकर चलने वाले नाट्य संगठनों से अपने आपको अधिक जुड़ा पाता है। नाट्य जगत में भी दो धाराएं लगातार चलती नज़र आती हैं। एक वह जो नाटक को मात्र मनोरंजन का साधन मानते हैं, दूसरे वह जो नाटक को सामाजिक परिवर्तन का औजार समझते हैं। पहली नज़र में तो दोनों ही अपनी-अपनी जगह सही नज़र आते हैं। लेकिन गहराई से अध्ययन करने पर समझ आता है कि जिस धारा ने भी अपने आपको कट्टर रखा वही धीरे-धीरे सूखती नज़र आयी। नाटक को सिर्फ हंसी-ठठ्ठा मनोरंजन, समझने वाले संगठनों का डिब्बा भी जल्दी ही गोल हो गया। एक समय दिल्ली जैसे महानगर में चलने वाला पंजाबी थियेटर इसका उदाहरण है। जिनका केन्द्र सप्रुहाउस था। इन नाटकों ने एक समय दर्शकों को खूब खींचा लेकिन कुछ ही वर्षों में यह थियेटर पिछड़ गया। दूसरी तरफ नाटक

के माध्यम से उपदेश देने की बात करने वालों से भी दर्शक धीरे-धीरे परे हो गये। इससे स्पष्ट जाहिर है कि नाटक में मनोरंजन भी होने चाहिए और विचार भी। बगैर विचार के नाटक बगैर रूह के एक जिस्म नज़र आता है और बिना मनोरंजन में नाटक एक ढूंढ दिखलाई देता है जिसमें न पत्तियां हैं और न ही फूल। आज अनेक स्वयंसेवी सरकारी और गैर सरकारी संगठन नुक्कड़ नाटकों के माध्यम से अपना विचार या संदेश आमजन तक पहुंचाते हैं। अपनी शैली, प्रस्तुतिकरण और बुनावट के कारण नुक्कड़ नाटकों ने एक समय सामाजिक परिवर्तन में अपनी गहरी उपयोगिता सिद्ध की थी। थोड़े समय में अपने संदेश के सीधे-सीधे दर्शक तक पहुंचाने की क्षमता, नुक्कड़नाटकों की सीमा को समझे बगैर उनका उपयोग ऐसे ही रहा जैसे **भौंथरी कुल्हाड़ी** से एक मजबूत तने को काटना। लकड़ी का तो कुछ नहीं बिगड़ा पर काटने वाला लहुलुहान जरूर हो गया।

इसमें दो राय नहीं हो सकतीकि नाटक किसी विचार और संदेश को दर्शकों तक पहुंचाने का संगीत और चित्रकला से कहीं अधिक प्रभावी माध्यम है। इसका प्रयोग हमने कथारंग के द्वारा किया। हमें लगा कि आज जिन्दगी की आपाधापी और व्यस्तताओं के चलते लोग अपने उन महान सृजनकारों का नाम तक भूलते जा रहे हैं जिनकी रचनाओं ने समाज को एक नई दिशा दी थी। हमने तय किया एक ऐसा नाट्य समारोह आयोजित किया जाये जिसमें विश्व के महान कहानीकारों की कथाओं पर आधारित नाटक प्रस्तुत किये जायें।

वर्ष २००८ में शुरु हुआ यह समारोह अब चौथा पायदान पार कर गया और इस समारोह में मुंशीप्रेमचंद, ओ हेनरी, अंतोन चेखन, गाय द मोपांसा, रवीन्द्रनाथ टैगोर, हरिशंकर परसाई, मक्सिमगोर्की, अनातोले फ्रांस, इब्राहिम रहीम, सआदत हसन मंटो,

विजयदान देथा, वाजिदा तबस्सुम, भीष्म साहनी, जयशंकर प्रसाद, कृश्न चंदर जैसे अमर साहित्यकारों की कथाओं को मंच पर साकार किया गया। पिछले चार वर्षों में हजारों दर्शकों ने इन्हें देखा। यह प्रयोग सफल और सार्थक रहा। कोई भी महान रचना अपने भीतर मानवीय और सामाजिक परिवर्तन का विचार अवश्य रखती है। नाटक सामाजिक परिवर्तन में अपनी भूमिका निभाने वाला एक कारगर हथियार सिद्ध हो सकता है। इसमें संदेह नहीं कि परिवर्तन में बड़ी भूमिका राजनीतिक होती है लेकिन राजनीति को दिशा दिखलाने वाले लेखक और विचारक ही होते हैं। कलाएं इन विचारों का बीज आम जन के हृदय में रोपती हैं और यही विचार जब प्रस्फुटित होकर पनपते हैं तो परिवर्तन का कारण बन जाते हैं। नाटक में इन विचारों को जन-जन तक पहुंचाने की अपरिचित शक्ति है बशर्तें कि इसका सही उपयोग किया जाये । ❑

७४, विजय नगर, न्यू सांगानेर रोड़,
वीटी रोड़ मानसरोवर के सामने,
जयपुर, मो.नं. - ९८२९०११७५६

शिक्षण का सुख

अंजलि शर्मा

पढाना एक शिक्षक होने के नाते कर्तव्य या दायित्व के रूप में जाना जाता है। जब कोई कार्य दायित्व या कर्तव्य के बोध से जुड़ा हो तो उसमें आनन्द आश्चर्य जैसा लगता है। आज से लगभग पन्द्रह वर्ष पूर्व अपने जीवन को शिक्षक के रूप में जब आरम्भ किया तो इस दायित्व बोध से किया कि कक्षा में पढ़ाना है लेकिन इस बोध की परिणिती यह थी कि कक्षा में सभी कुछ अच्छा होने के बावजूद संतुष्टि का भाव अंकुरित नहीं हो पा रहा था। कक्षा में जाने से पहले एक चिन्ता और कक्षा पूर्ण होने पर संतोष की सांस कि आज का दिन तो पूर्ण हुआ। यहां यह अवश्य कहना चाहूंगी कि शिक्षक प्रशिक्षण में शिक्षण को इतना जटिल और यांत्रिक स्वरूप प्रदान कर दिया जाता है कि व्यक्ति शिक्षक होने पर अपनी सहजता भी भूल जाये। अत: इस प्रकार का प्रशिक्षण भी मूक असहाय सिद्ध हो रहा है।

शनै: शनै: यह अहसास बढ़ता गया कि पढ़ाना ऐसा हो जिसमें आनन्द आये, जब पढ़ाते हुए शिक्षक आनन्द का अनुभव करें तभी वह अपने विद्यार्थियों के हृदय तक पहुंचता है। फिर यह स्वाभाविक रूप से घटित होने लगा कि कक्षा में विद्यार्थियों के मध्य समय का पता ही नहीं लगता, उस आनन्द की अनुभूति और बढ़ जाती, जब बच्चे कहते कि आज तो समय का पता ही नहीं लगा जबकि पहले चालीस मिनट का कालांश पहाड़ सा प्रतीत होता था।

दूसरा पक्ष जो पढ़ाने से संबंधित है कि कक्षा चलती रहे, विद्यार्थी खुश रहें तथा स्वाभाविक रूप से बातचीत करें, अपनी बातें कहें, मेरी बातें सुनें यह सब भी मेरी कक्षा में घटित होने लगा लेकिन हुआ तब, जब मैंने गिजुभाई बधेका की पुस्तक **'दिवास्वप्न'** पढ़ी और मैं कक्षा में अनुशासन के मिथक खोल से बाहर निकली और कक्षा में विषयवस्तु की चर्चा के साथ-साथ कहानी, कविता भी स्थान लेने लगी। इस सबने मुझे बच्चों से इस प्रकार जोड़ दिया कि वे मेरे नहीं आने पर मुझसे पूछने लगे कि आप क्यों नहीं आयी थीं, आप नहीं आयीं तो हमें अच्छा नहीं लगा। मेरे अन्दर एक हर्ष, खुशी और भराभरा सा महसूस होने लगा।

एक बार कुछ बड़ी उम्र के विद्यार्थियों को पढ़ाने का अवसर मिला, जिसमें मेरी एक छात्रा अपनी पोती को साथ लाती थी और वह बच्ची कक्षा भी में कुछ मीठी मीठी बातें करती, प्रश्न पूछती, चुटकुले सुनाती और कक्षा की चर्चा आगे बढ़ती, उस कक्षा में समय सीमा का किसी को भान नहीं रहता था। इस कक्षा में एक बड़े उम्र के व्यक्ति भी थे जिन्होंने कहा कि हमें लगता है कि यदि आपने हमें पढ़ाया तो निश्चय ही हम उस लक्ष्य को प्राप्त कर लेंगे जिस पर चल रहे हैं। उनके इस वाक्य से मुझे लगा कि अब मैं अपने लक्ष्य की ओर सही दिशा ही नहीं सही राह पर भी चल रही हूं।

पढ़ाना एक इस प्रकार का आनन्द है, खुशी है, जो व्यक्ति के चेहरे पर झलकती है, पढ़ाते हुए व्यक्ति यह भूल जाता है कि वह क्या है ? कहां है ? पढ़ाने में विषयवस्तु को वास्तविक जीवन से जोड़ना ही स्वाभाविकता लाता है। इससे विद्यार्थियों में विषयवस्तु के प्रति ग्राह्यता बढ़ गयी और वह उसे स्वीकार करने के लिए सहर्ष तैयार हो गये। यह स्पष्ट हो गया कि शिक्षा ऐसी होनी चाहिये जो बालक की स्वाभाविकता को बनाये रखे, नष्ट न होने दे। शिक्षा में यह पढ़ाने के द्वारा ही संभव है, इस प्रकार पढ़ाना हो कि शिक्षक, शिक्षार्थी, दोनों धूपछांव का अनुभव करें, सागर की लहरों में गोते लगायें, ठंडी हवा के झोंके में हिलोरें लें।

पढ़ाने में आनन्द की अनुभूति में एक पक्ष और जुड़ता है वो है साहित्य अध्ययन। मैंने अनुभव किया कि शिक्षक के लिये कहा जाता है कि उसे अध्ययनशील होना चाहिये

जो एकदम सत्य है। यद्यपि बहुत अधिक नहीं पढ़ पायी हूं लेकिन जैसे-जैसे साहित्य का अध्ययन किया, कक्षा में स्वाभाविकता बढ़ती चली गयी, आनन्द की अनुभूति बढ़ती चली गयी और ढहने लगी कक्षा की चारदीवारी और लगा शांति निकेतन का वातावरण ही पढ़ाने के लिये सर्वथा उचित राह है। जहां पढ़ाने वाला भी मग्न और पढ़ने वाला भी मग्न हो। बालक प्रकृति प्रेम से भरा है उसे दंड से कैसे हरा भरा रखा जा सकता है। बालक में कोमलता होती है कठोरता द्वारा कैसे उस कोमलता को बनाये रखा जा सकता है। बालक में हास्य होता है नीरसता द्वारा कैसे उसे पोषित किया जा सकता है। बालक में निश्चलता होती है, दूरी कैसे उसे निश्चलता को नष्ट होने से बचा सकती है। बच्चा एक कली है उसे पुष्प के रूप में खिलाने के लिये आवश्यक है कि शिक्षक उन्हें प्रेम करे, हंसाये, पुचकारे, उनके समीप जाये और यह तभी कर पाता है जब उसको कक्षा में आनन्द आये।

मेरी कुछ छात्राओं ने मुझे कार्ड बना कर दिया। एक छात्रा ने कहा आप मुझे अच्छी लगती हैं। एक ने कहा मैं आपसे प्यार करती हूं। एक छात्रा ने कहा, आप में मुझे अपनी मां दिखाई देती है। एक छात्रा ने कहा कि मैं पी.एच.डी. तभी करूंगा जब आप मेरी शोध निर्देशिका बन सकेंगी, मेरे विद्यार्थियों ने गत वर्ष कहा कि जिस दिन आप कक्षा नहीं लेती उस दिन हमें अच्छा नहीं लगता। कुछ ने कहा आप जिस दिन नहीं आयेंगी उस दिन हम भी नहीं आयेंगे हमें बता दीजिए। कभी कक्षा में पूछा कि थक गये होंगे अब कक्षा छोड़ दूं विद्यार्थियों ने कहा 'नहीं।' सच विद्यार्थियों से जुड़ने का अहसास कितना आनन्द देता है।

शिक्षक के लिय सच्चा सुख है पढ़ाना। ❑

ए-३५०, त्रिवेणी नगर,
जयपुर
मोबाईल - ९४६०४७३७७७

डर

❑

ज्योति राज प्रसाद

डर की उम्र
ज्यादा होती है
लड़की से...
वो पैदा होता है
उससे पहले...
उसकी रंगों से
रूह में
जगह बनाता है
उसकी उम्र के साथ
बढ़ता जाता है ...

उसकी मृत्यु के साथ
पुनर्जन्म लेता है
नई पीढ़ी में...
वो बच्ची हो
युवती हो
प्रौढ़ा हो
वृद्धा हो
वो सब में बसता है
सार्वभौम है...

गर्भ से चिता तक
हर लड़की को
दिल खोलकर
जो दिया है
इस समाज ने
सिर्फ 'डर' है...।❑

न्यू मोहन निवास, स्टोन ले कम्पाउंड,
नैनीताल (उत्तराखंड)

वेदों का काल निर्धारण : कितना मुश्किल !

❑

रेणुका राठौड़

परम्परा और आधुनिकता की लड़ाई कोई नयी नहीं है, कम से कम सौ वर्ष पुरानी तो है ही। प्राचीन के प्रसंग को सदैव आधुनिकता की आंच पर परखा जाता रहा है। पश्चिम ने जब से परकाया-प्रवेश किया और पूरब पर अपना प्रभाव जमाया, तभी से यह होड़ चल पड़ी कि प्रत्येक प्राचीन विषय को काल के सांचे में ढाला जाये। अब तो इस विभेद की वे दीवारें भी भंग हो चुकी हैं जिसमें यह कह दिया जाता था कि अमुक पूरब की जागीर है और अमुक पश्चिम की।

अभी कुछ दिन पूर्व एक ऐसे ही विषय पर चर्चा सुनी, जो शताब्दियां बीत जाने पर भी अधरझूल में ही लटका है-वेद के काल-निर्धारण का विषय। यह विषय अब तक एक पहली बना हुआ है। वेदों के काल निर्धारण का प्रश्न अब तक अनउत्तरित है। चूंकि यह प्रश्न अस्मिता से जुड़ा है इसलिए इसे यह कहकर नज़र अन्दाज़ नहीं किया जा सकता कि इसकी कोई आवश्यकता नहीं है।

यह बात उस समय की है जब अंग्रेजों के आगमन के बाद भारत के समृद्ध भौतिक-कोष पर अधिकार के साथ-साथ विपुल ज्ञान-राशि पर भी आधिपत्य जमाने की कोशिश हुई। भारत के ग्रंथ पश्चिम के पुस्तकालयों में पहुंचा दिये गये। वैदिक संस्कृत, जो उस समय भारतीयों के लिए भी दुर्गम हो चली थी, पाश्चात्य पारखियों ने उसे पात्रता अर्जन की परवाह किये बिना बींधना शुरु कर दिया। ऐसे ही समय में एक जर्मन विद्वान प्रोफेसर फ्रेडरिक मैक्समूलर ने सन् १८५९ में यह घोषित किया कि मैं जिन ग्रंथों का अध्ययन कर रहा हूं उनमें प्राचीनतम ऋग्वेद की रचना १२०० विक्रम पूर्व के आसपास हुई है। इतिहास में वे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने वेदों के अध्ययन-क्रम में काल-निर्धारण को प्रमुखता दी। मैक्समूलर ही पहले विदेशी भी थे जिन्होंने अंग्रेजी में वेदों का अनुवाद एवं भाष्य किया। लन्दन में लगभग दस वर्ष तक भारत से लायी गयी पांडुलिपियों का अध्ययन करने के उपरान्त उन्होंने अपना भाष्य लिखा। यह अनुवाद वेदों के शाब्दिक अर्थ पर आधारित था।

प्रश्न यह उठता है कि जिस वैदिक ज्ञानधारा का पीढ़ियों से अध्ययन करने पर भी भारतीय प्रज्ञा पान नहीं पा सकी। उसे मात्र कुछ वर्षों के तर्क एवं बुद्धिपरक चिन्तन से क्या समझा जा सकता है ? हर्ष का विषय यह है कि आधुनिक भौतिक अनुसंधानों से अतृप्त विश्व-मानव अब पुरातन ज्ञान-कन्दराओं में झांकने लगा है किन्तु चिन्ता का विषय यह है कि इसके लिए पात्रता अर्जन का प्रयास अब भी गौण ही है। प्रधानता अब भी शब्द की ही है। आज मैक्समूलर महोदय के अनुवाद, वेद को समझने के आधार-ग्रंथ बन गये हैं।

प्रोफेसर मैक्समूलर ने मात्र छः सौ वर्षों की अवधि में वेदों के रचनाकाल को समेट लिया। इस प्रसंग में मुझे संस्कृत वाङ्मय के प्रतिष्ठित विद्वान आचार्य बलदेव उपाध्याय की टिप्पणी बहुत उपयुक्त लगती है, वे कहते हैं 'किसी प्रतिष्ठित विद्वान की चलाई कल्पना, चाहे वह अत्यन्त निराधार ही क्यों न हो, जब एक बार चल निकलती है, तब विन्ध्य की बरसाती नदियों की धारा की तरह रोके नहीं रुकती। वह अपने सामने आयी सब प्रकार की विघ्न बाधाओं को, प्रबल विरोधों को दूर हटाती हुई सरकती चली ही जाती है, ठीक यही घटना इस कल्पना के साथ भी घटी। मैक्समूलर ने जिसे एक सामान्य संभावना के रूप में अग्रसर

किया था, उसे ही उनका सिक्का मानने वाले लोगों ने एक मान्य वैज्ञानिक तथ्य के रूप में ग्रहण कर लिया।'

मज़े की बात यह है कि उसके बाद तो वेदों के काल-निर्धारण के प्रयासों की मानो होड़ सी लग गयी। जिस किसी भी पाश्चात्य विद्वान ने बाद में वैदिक साहित्य को अपनी जिज्ञासा का आधार बनाया, उन्होंने तो अपने-अपने कयास इस विषय पर लगाये ही, भारतीय विद्वानों ने भी इसके बाद इस विषय को अपने अनुसंधान का एक प्रधान विषय बनाया। इस उलझन को सुलझाने के प्रयास में मुख्य सिरा तो हाथ से फिर सरक कर गुम हो गया, इसका आभास भी नहीं हुआ।

कहते हैं कि अपने जीवन के अंतिम बरसों में प्रोफेसर मैक्समूलर की विचारधारा अन्तर्मुखी हो गयी थी। ब्रिटिश साम्राज्यवाद द्वारा उन्हें जो दायित्व सौंपा गया था, वह तो उन्होंने पूरा कर ही लिया था किन्तु जीवन के संध्याकाल में उन्होंने कुछ ऐतिहासिक स्वीकारोक्तियां भी की थीं, जिस पर अवश्य ध्यान दिया जाना चाहिए। १८९० में उन्होंने जिफोर्ड भाषणमाला के दौरान स्पष्ट रूप से कहा था कि मैंने १००० ईसा पूर्व की जो सीमा निर्धारित की है वह तो ऋग्वेद के रचनाकाल की अंतिम सीमा है। इसके बाद ऋग्वेद का समय नहीं माना जा सकता। किन्तु उससे कितना पहले ऋग्वेद की रचना हुई होगी, यह बताना संभव नहीं है।

एक भारतीय होने के कारण और वेद की विद्यार्थी होने के नाते मुझे प्रोफेसर मैक्समूलर ने इससे आगे जो कहा, वह और भी हृदयस्पर्शी लगता है, उन्होंने कहा कि 'इस पृथ्वी तल पर कोई भी शक्ति ऐसी नहीं है जो कभी यह निश्चय कर पाने में समर्थ हो कि वैदिक मंत्रों की रचना १००० या १५०० या २००० या ३००० वि.पू. में की गयी।'

किन्तु विद्वानों के बीच प्रो. मैक्समूलर का वेद का रचनाकाल संबंधी पूर्व वक्तव्य इतना प्रचलित हो चुका था कि उनके द्वारा उत्तरकाल में दिये गये इस वक्तव्य को लगभग भुला दिया गया। वेद के काल-निर्धारण के सम्बन्ध में अनेक विद्वानों ने ज्योतिष-शास्त्र को अपना आधार बनाया इनमें लोकमान्य बालगंगाधर तिलक, पंडित बालकृष्ण दीक्षित, जर्मन विद्वान डॉक्टर याकोबी, प्रो.लुडविग इत्यादि अनेक विद्वानों ने अपने-अपने मत प्रकट किये जो लगभग ४००० ई.पू. तक जाकर ठहरते हैं।

यहां डॉ. अविनाशचन्द्र दास का मत भी उल्लेखनीय है जो उन्होंने ऋग्वेद में वर्णित भौगोलिक परिवेश तथा भूगर्भशास्त्रियों के मतों का मिलान करने के बाद प्रकट किया। उनके अनुसार ऋग्वेद का रचनाकाल लगभग २५ हजार वर्ष ई.पू. माना जाना चाहिए। उन्होंने अपनी पुस्तक ऋग्वेद इंडिया में लिखा है - कि ऋग्वेद की कुछ ऋचाएं जब जमीन और पानी के विभाजन का सप्तसिंधु में उल्लेख करती हैं तो यह माननी पड़ेगा कि वेद उसी काल का है जब ऐसा विभाजन एक सच्चाई था। एक वक्त था जब सारा राजपूताना भी एक समुद्र था गंगा के मैदान भी। ऐसी स्थिति में ऋग्वेद को उतना ही प्राचीन मान लेना युक्तिसंगत जान पड़ता है।

हाल ही में फ्रेंच पुरातत्त्वविदों ने पाकिस्तान स्थित बोलान-पास के निकट मेहरगढ़ की अतिप्राचीन सभ्यता का अन्वेषण किया है जिसे सात से आठ हजार ई.पू. की सभ्यता माना जा रहा है। एक आधुनिक पाश्चात्यविद् डेविड फ्रॉले ने प्राचीन भारतीय सभ्यता एवं वैदिक सभ्यता का मूल्यांकन करते हुए उसे मेहरगढ़ से उद्‌भूत करते हुए प्राचीन भारत के विकास की रूपरेखाा निर्धारित की है।

जैसे-जैसे इतिहास की परतें उधड़ेंगी, खुलेंगी, वैसे-वैसे नवीन तथ्य सभ्यता एवं संस्कृतियों के साथ जुड़ते चले जाएंगे पर ध्यान देने की बात तो यह है कि ज्ञान की धारा इन ऐतिहासिक तथ्यों की ओट में कहीं ओझल न हो जाये। जिस शाश्वत सत्य के उद्‌घाटन और स्थापन के लिए हमारे प्राचीन मनीषियों ने वेद की सहस्रधारा को प्रवाहित किया, उसे यदि काल और अन्य मतान्तरों के निर्धारण में बांधने की अपेक्षा होती, तो वह भी उसी समय ही कर दिया गया होता। किन्तु सच्चाई तो यह है कि ज्ञान काल-निरपेक्ष है। उसे बांधने का प्रयास मनुष्य भले ही करता हो पर उसे जब अपनी भूल का अहसास होतो है तो वह भी अखंडता की अविरल धारा में बहने लग जाता है। सहस्राब्दियों से निरंतर बहती वैदिक धारा के आदि और अंत का निर्धारण भला कैसे किया जा सकता है ? ❑

'सागरमाथा' करणी विहार
झोटवाड़ा, जयपुर

शिक्षकों एवं लेखकों से अपील

❑

{शिक्षा के क्षेत्र में किए जा रहे हर नव-प्रयोग को हम सविस्तार अनौपचारिका में प्रकाशित करना चाहते हैं। शिक्षकों और शिक्षाकर्मियों से अनुरोध है कि वे अपने प्रयोगों अथवा नये प्रयासों के अनुभव लिखकर भिजवायें। हमें अच्छे लेखों व शिक्षा की नयी किताबों पर टिप्पणियों की भी प्रतीक्षा रहती है। पाठक अपनी रचनाएं भिजवाकर अनुग्रहीत करें। रचना के साथ रचना संबंधी फोटो तथा स्वयं का फोटो भी अपने संक्षिप्त परिचय के साथ अवश्य भिजवायें। ❑सं.

फिरकी आयी थिरक थिरक कर

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद अर्थात एनसीईआरटी ने अभी हाल ही में **फिरकी बच्चों की** नामक द्विभाषिक और त्रैमासिक पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ किया है। इस पत्रिका का पहला अंक **जुलाई-सितम्बर, २०११** अभी पिछले दिनों ही छपकर आया है। यह बहुरंगी पत्रिका बालकों के लिए रोचक कविताओं, चित्र कहानियों, पहेलियों, खेलों, तस्वीरों, कार्टून स्ट्रिपों आदि का एक आकर्षक उपहार बन कर आयी है। कुछ सामग्री अंग्रेजी में है और कुछ सामग्री हिन्दी में। चित्रांकन **अतनु राय** का है और साज-सज्जा- **बिरेन्द्र सिंह नेगी** की । इस पत्रिका की कार्यकारी संपादिका हैं **उषा शर्मा** और **मीनाक्षी खार**। संपादन मंडल में एनसीईआरटी से जुड़े जिन शिक्षाविदों का नाम है वे हैं **उषा दत्ता, कीर्ति कपूर, ज्योत्स्ना तिवारी, मंजुला माथुर, राजाराम शर्मा, लता पांडे, श्वेता उप्पल** और **संध्या सिंह**।

परामर्शदाता मंडल में शामिल हैं- **अतनु राय, केदारनाथ सिंह, कृष्ण कुमार, प्रभात झा, प्रयाग शुक्ल, बाल शौरि रेड्डी, मालविका राय, रमेश थानवी, रामजन्म शर्मा, लतिका गुप्ता, श्रीप्रसाद** और **सुशील शुक्ल**।

सहयोग दिया है -**अरिबम अबेम देवी, तान्या सूरी, प्रमोद तिवारी, मानसी सिन्हा, मेघा, रीटा थोकचॉम, विनीता अरोड़ा, सारिका वशिष्ठ** और **सोनिका कौशिक**।

यह पत्रिका बहुत परिश्रम के साथ कई साथियों से विचार-विमर्श करने के बाद तैयार हुई है और यह पत्रिका निःशुल्क वितरण के लिए प्रकाशित की गयी है।

रंगीन चित्रों, रोचक रेखांकनों एवं रंग-बिरंगी तस्वीरों से सजी हुई यह पत्रिका बालकों को सहज ही पढ़ने की ओर आकर्षित करेगी। आवरण पृष्ठ पर ही **सुशील शुक्ल** की कविता - फिरकी के प्रकाशन का आशय भी स्पष्ट करती है :

अक्कड़-बक्कड़ खूब घुमक्कड़
मेरा नाम है फिरकी
कुछ मुझको कहते हैं
मैं हूं माथापच्ची सिर की

खेल-खिलौने, कथा-कहानी,
तुम्हें सुनाऊंगी
जब भी याद करोगे
पास तुम्हारे आऊंगी।
हम-तुम मिलकर बात करेंगे।
तब फिर दुनिया भर की।

संपादकों का ध्यान इस बात पर है कि बाल पाठक कुदरत के करीब जायें पर्यावरण के बारे में एक जाग्रति उनके मन में आये और वे लोग हिन्दी और अंग्रेजी की सरल रचनाएं पढ़ते हुए अच्छी पुस्तकें पढ़ने का मन बनायें।

इस पत्रिका में कार्टून तो हैं मगर बाल जीवन में उमड़ता घुमड़ता सहज विनोद कहीं सामने नहीं आया है। स्कूली जीवन अथवा कक्षा में बनते-बदलते और बिगड़ते बाल-व्यवहार से भी कुछ लिया जा सकता था। पत्रिका बहुत पठनीय बन पड़ी है। सभी संपादक और सहयोगी बंधु बधाई के पात्र हैं। रेखांकन करने वाले कलाकार अतनु राय ने भी विशेष मेहनत की है। मौसम के बारे में सर्दियों की बात करती मोहित शर्मा की रचना जब कक्षा में रजाईयों की बात करती है और रजाई ओढ़े मास्टरजी के पढ़ाने की बात करती है तो बच्चों के मन में गुदगुदी करने की बात भी करती है। अंग्रेजी की रचनाएं भी सरल हैं और पूरी पत्रिका में कहीं कुछ भी गरिष्ठ नहीं है विश्वास है यह पत्रिका देश के स्कूलों में बाल-पाठकों द्वारा बहुत पसन्द की जायेगी।❑ **पत्रिका का प्राप्ति स्थान :-**

प्रकाशन विभाग
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान
और प्रशिक्षण परिषद्,
श्री अरविन्द मार्ग,
नयी दिल्ली-११००१६

भोपाल की चिट्ठी

जश्न-ए-बचपन

चकमक के ३०० वें अंक के विमोचन के अवसर पर शहरी शिक्षा में काम करने वाले एकलव्य के समूह 'शिरकत' और 'चकमक' ने मिलकर तीन दिनी जश्न-ए-बचपन का आयोजन किया था। पहले दिन २१ अक्टूबर को **शिक्षा में बाल साहित्य की भूमिका** विषय पर व्याख्यान हुए। इसमे जाने माने शिक्षाविद् कृष्णकुमार व मुकुल प्रियदर्शिनी तथा साहित्यकार उदयन वाजपेयी ने अपने विचार रखे। दूसरे दिन बच्चों के साहित्य की वर्तमान चुनौतियां विषय पर प्रो. राजा मोहन्ती, दिलीप चिंचालकर, कवि गुलज़ार, उदयन वाजपेयी के अलावा कथाकार अनुष्का रविशंकर, सुशील शुक्ल, राजेश उत्साही तथा कवि प्रयाग शुक्ल ने अपने विचार व्यक्त किए। चकमक के विमोचन से पूर्व कवि गुलज़ार ने रवीन्द्रनाथ की बच्चों की नज़्मों का पाठ किया तथा कवि प्रयाग शुक्ल ने अपनी कुछेक कविताएं बच्चों के साथ मिलकर गाईं। इसके बाद मशहूर **नया थियेटर** के कलाकारों ने **चरणदास चोर** नाटक का मंचन किया। तीसरे दिन लगभग साढ़े पांच सौ बच्चों ने मिट्टी के खिलौने, कागज़ से खिलौने, विज्ञान के प्रयोग तथा मुखौटे बनाने जैसी कई मज़ेदार गतिविधियां कीं।

इसके अलावा तीसरे दिन चकमक में लिखने वाले हिन्दी के जाने-माने लेखकों व कवियों ने अपनी रचनाओं का पाठ किया। इनमे कवि अरुण कमल, गुलज़ार, नरेश सक्सेना, उदयन वाजपेयी, प्रयाग शुक्ल तथा कथाकार मंजूर एहतेशाम, असगर वजाहत, प्रियम्वद, वरुण ग्रोवर तथा रिनचिन शामिल रहे। इस आयोजन मे विभिन्न शहरों से चकमक से जुड़े चित्रकारों, लेखकों, शुभचिंतकों ने भाग लिया। ❑
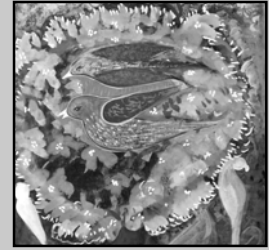
जब मैं छोटा था

❑

एक दिन मैं जा पहुंचा ज़ू
एक जानवर जैसे पूह
मां बोली, ये तो है भालू
फिर मैंने देखा इक बन्दर
कूदता-फिरता मस्त कलन्दर
इक लट्ठे से कूदा उजबक
उतरो पीठ से, बोला मेंढ़क
फिर देख आता एक शेर
गुस्साता-गुर्राता शेर
सिर पर पांव रखे और भागे
रुके पहुंचके मां के आगे। ❑

- अधिराज जाधव, कक्षा-७ वर्ष,
पुणे, महाराष्ट्र

बूंदी की चिट्ठी

आंगनबाड़ी का आदर्श शिक्षा केन्द्र

बूंदी जिले (राजस्थान) के रामगंज बालाजी में जिला कलेक्टर सुश्री आरती डोगरा द्वारा एक अभिनव आंगनबाड़ी शिक्षा केन्द्र का लोकार्पण पिछले कुछ महीने पूर्व किया गया था। बाल मनोविज्ञान को ध्यान में रखकर सार्वजनिक-निजी भागीदारी के तहत शुरू किए गए इस आदर्श शिक्षा केन्द्र के सकारात्मक परिणाम आने शुरू हो गए हैं। महिला बाल किवास विभाग की पहल पर इस केन्द्र को बच्चों को अच्छी लगने वाली विषय-वस्तु के अनुकूल सजाया गया। दीवारों और छत को किताबों के पन्नों की शक्ल दी गई। दीवारों पर प्यासे कौवे की कहानी के अलावा सूरज, चांद, सितारों को कविताओं के जरिये चित्रित किया गया। इनके अलावा, पशु-पक्षियों और फलों को भी बहुत खूबसूरती के साथ चित्रित किया गया। केन्द्र के चित्रांकित कक्ष में बालकों के पढ़ने, लिखने व सीखने के लिए बैठने की अच्छी व्यवस्था की गई। फर्नीचर व खिलौने आदि भी उपलब्ध कराए गए। बच्चों को साफ-सफाई की आदतें, बोलचाल के तौर-तरीके जैसी चीजें सिखाने पर भी विशेष ध्यान दिया जा रहा है। केन्द्र में बेहतर पठन माहौल के कारण इसके बेहतर परिणाम दिखने के मद्दे नजर प्रशासन ऐसे केन्द्रों की संख्या बढ़ाने पर विचार कर रहा है।

प्रौढ़ों और नवसाक्षरों के लिए भी इसी तर्ज पर निजी या प्रशासन की पहल पर बेहतर पठन माहौल वाला शिक्षा केन्द्र विकसित किया जा सकता है। ❑

बूंदी की चिट्ठी

तीन छात्राओं ने की आत्म हत्या

ट्यूशन पढ़ने गयी तीन स्कूली छात्राओं ने जहर खा कर जान दी । बारां में आत्महत्या करने वाली तीनों छात्राओं पर पढ़ाई का दबाव इतना बढ़ गया था कि उन्हें जीवन अंधकारमय लगने गा, वहीं परिजनों की आशाएं भी धूमिल होती नजर आयीं। पढ़ाई के दबाव को सहन नहीं कर पाने के कारण तीनों ने जहरीली गोलियां खाकर मौत को गले लगा लिया । पुलिस मुख्यालय के आदेश पर हुई जांच में ये तथ्य सामने आये हैं।

छात्रा गार्गी दुबे, ईशा कलवार और अक्षिता सोनी पढ़ाई का बोझ सहन नहीं कर पा रही थी। तीनों छात्रा बारां स्थित केन्द्रीय विद्यालय में विज्ञान संकाय में ग्यारहवीं कक्षा में थीं । तीनों ने जीव विज्ञान विषय लिया । जीव विज्ञान में तो तीनों होशियार थीं, लेकिन फिजिक्स और कैमिस्ट्री में कमजोर थीं। ट्यूशन करने पर भी पढ़ाई का दबाव कम नहीं हो पाया । ट्यूशन पर जाते समय तीनों ने जहर की गोलियां खा लीं । यह घटना बताती है कि नौनिहाल पढ़ाई को लेकर कितने तनाव में है । पढ़ाई के दबाव से जूझते बच्चों को लगता है कि अगर वे टॉप नहीं आये तो दुनिया में आगे बढ़ने के उनके तमाम दरवाजे बंद जायेंगे वे माता-पिता को उनकी अपेक्षाओं पर खरा नहीं उतरने पर क्या जवाब देंगे?

बिहार की चिट्ठी

पटना में पुस्तक मेला

बिहार की राजधानी पटना में गत ११ से १९ नवम्बर तक नेशनल बुक ट्रस्ट एवं बिहार सरकार के सहयोग से स्थानीय गांधी मैदान में 'राष्ट्रीय पटना पुस्तक मेला' का आयोजन किया गया।

इसमें लगभग १७० प्रकाशकों ने भागीदारी की। लगभग ७०,००० वर्ग फुट में फैले इस पुस्तक मेले का हर उम्र के पाठकों ने आनंद लिया, मनपसंद पुस्तकें खरीदीं और पुस्तकों की आत्मीयता को महसूस किया। पाठकों ने लेखकों से मुलाकात की और लेखकों ने पाठकों को अपने ऑटोग्राफदेने के साथ ही उन्हें सफलता के सभी द्वार पार करने के लिए शुभकामनाएं दीं। इस दौरान राष्ट्रीय बाल साहित्य केन्द्र ने तीन दिवसीय कार्यक्रमों का आयोजन किया। जिसमें प्रमुख थे-'बच्चों का सृजनात्मक लेखन व चित्रांकन पर कार्यशाला, रचना पाठ सत्र एवं पोस्टर निर्माण कार्यशाला तथा युवाओं के लिए 'मीडिया मे कैरियर' विषय पर संगोष्ठी।

इन कार्यशालाओं में देश के ख्याति प्राप्त विद्वानों ने शिरकत की, जिसमें समीना मिश्र, कुमार विकास, इमरान मुस्तफा, वर्तिका नंदा प्रमुख थे।

इसके अलावा ट्रस्ट द्वारा व्यंग्य पाठ का आयोजन किया गया जिसमें चर्चित व्यंग्कारों पद्म श्री रवीन्द्रराज हंस (पटना), अनूप श्री वास्तव (लखनऊ), अनुराग वाजपेयी (जयपुर), गिरीश पंकज, महेन्द्र ठाकुर (रायपुर), हरीश नवल, प्रेम जनमेजय (दिल्ली), सुभाषचंदर (गाजियाबाद) और यज्ञ शर्मा (मुंबई) ने अपनी व्यंग्य रचनाएं सुनाकर उपस्थित जनसमूह को मंत्रमुग्ध कर दिया।

बाल दिवस पर 'बच्चों की पुस्तकों में बचपन' विषय पर राष्ट्रीय संगोष्ठी हुई।

सुरेन्द्र विक्रम (लखनऊ), ओमप्रकाश कश्यप (गाजियाबाद), डॉ. प्रकाश मनु (हरियाणा), रमेश तैलंग, डॉ. दिविक रमेश, (दिल्ली) और डॉ. शिवनारायण (पटना) ने विचार व्यक्त किए।

'लेखक से मिलिए' कार्यक्रम के अन्तर्गत डॉ. गंगाप्रसाद विमल व उषा किरण खान साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित मैथिली लेखिका ने भी अपने अनुभव पाठकों के साथ साझे किए।

ट्रस्ट की ओर से मेले में अतिथि सम्मान का दर्जा इस वर्ष के साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित कथाकार उदय प्रकाश को दिया गया।

पुस्तक मेले में फिरोज बख्त अहमद लिखित और ट्रस्ट से प्रकाशित पुस्तक 'मौलाना अबुल कलाम आजाद' का लोकार्पण उर्दू साहित्यकार व साहित्य अकादमी से सम्मानित लेखक अब्दुसमद ने किया। इस अवसर पर खुदा बख्श लाइब्रेरी के निदेशक इम्तिया अहम ने कहा कि मौलाना के नाम से शिक्षा दिवस मनाने वाला बिहार देश का पहला राज्य है। कथाकार उदय प्रकाश ने कहा - हिन्दुस्तान को अखंड रखने के मौलाना के क्षेत्र में योगदान को कभी भुलाया नहीं जा सकता।

डॉ. गंगाप्रसाद विमल ने कहा- राष्ट्रीय स्मृति के रूप में मौलाना की यादों को व्यापक दायरा देने का यही मौका है। उर्दू संपादक डॉ. शम्स इकबाल ने कहा कि पुस्तक का प्रकाशन अंग्रेजी व हिन्दी में शीघ्र किया जाएगा।

ट्रस्ट के सभी कार्यक्रमों का संचालन हिन्दी संपादक डॉ. ललित किशोर मंडोरा ने किया।

'बादे नौ बहार, दयारे हिन्दी में फैज़' कार्यक्रम में जहूर सिद्दीकी, असगर वजाहत व डॉ. अरुण कमल ने फैज़ के संदर्भ में विचार प्रस्तुत किए।

पुस्तक मेले में उमड़ी भीड़ को देखकर लग रहा था कि पाठकों में पुस्तकों के प्रति कितना प्यार, समर्पण और उत्साह है। ❑

ललित किशोर मंडोरा, नयी दिल्ली

बिना नाम की नदी

❑ केदारनाथ सिंह

मेरे गांव को चीरती हुई
पहले आदमी से बहुत
पहले से
चुपचाप बह रही है
वह पतली-सी नदी
जिसका कोई नाम नहीं
तुमने कभी देखा है
कैसी लगती है
बिना नाम की नदी ?
कीचड़, सिवार और
जलकुम्भियों से भरी
वह इसी तरह बह रही है
कई सौ सालों से
एक नाम की नदी।❑
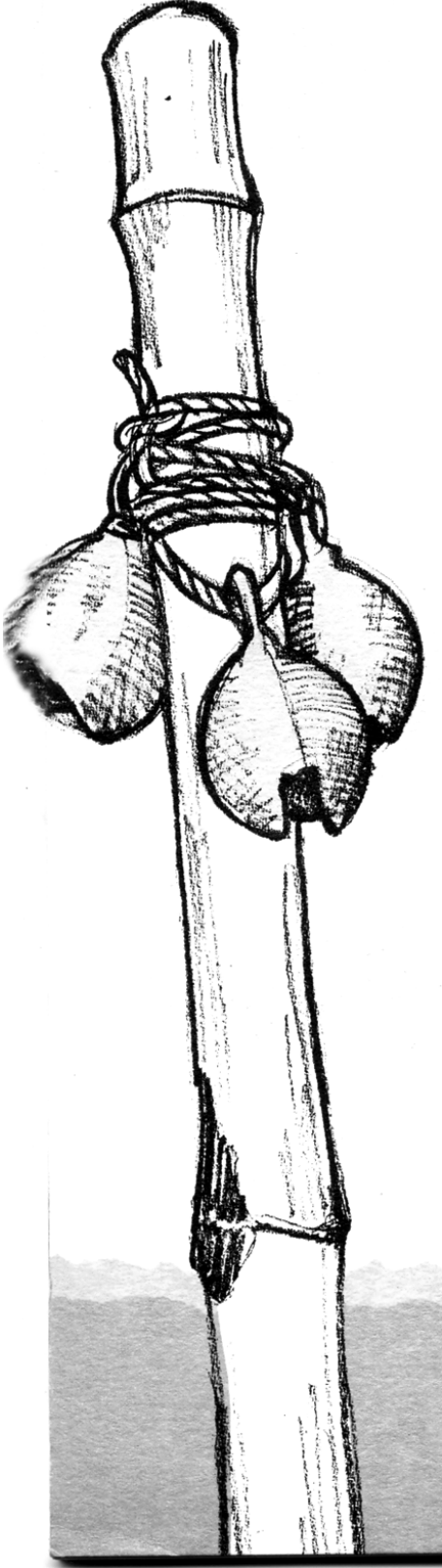
एक लाठी ऐसी भी

एक लाठी है। लेकिन यह साधारण लाठी नहीं है। इसके ऊपरी सिरे पर बड़े आकार के दो-चार घुंघरू लगे हैं।

इस लाठी का नाम है खांकर। खांकर लेकर महिलाएं वन में रखवाली करती हैं। हर कदम पर लाठी जमीन पर लगती है और खांकर के घुंघरू खनक जाते हैं। एक खांकर की संगीतमय ध्वनि वन की घनी चुप्पी को तोड़ती वन के दूसरे भागों में इसी तरह रखवाली कर रही अन्य महिलाओं को एक दूसरे से जोड़े रखती है। यह संगीतमय लाठी एक अन्य सुरीली व्यवस्था का भी अंग हे। सांझ को वन की रखवाली के बाद महिलाएं गांव वापस आती हैं और अपनी खांकर अपने घर के दरवाजे के आगे न रख किसी अन्य महिला के दरवाजे पर टिका देती हैं। इसका अर्थ है कल इस घर की महिला खांकर लेकर वन रखवाली के लिए निकलेगी। ❑

समिति में बीज अधिकारियों का प्रशिक्षण

राजस्थान सीड्स कार्पोरेशन ने पिछले दिनों नये बीज अधिकारियों का चयन किया है। इन नये बीज अधिकारियों के प्रशिक्षण का प्रस्ताव समिति के निदेशक राजवीर सिंह ने सहर्ष स्वीकार किया और लगभग एक माह लम्बे प्रशिक्षण का आयोजन समिति में दो भागों में संपन्न हुआ। पहला भाग 10 से 25 अक्टूबर तक संपन्न हुआ और इसी प्रशिक्षण का अनुवर्ती प्रशिक्षण 14 से 25 नवम्बर तक आयोजित किया गया। इस प्रशिक्षण में 24 नव प्रवेशी बीज अधिकारियों ने भाग लिया। इस प्रशिक्षण का शुभारंभ कृषि विभाग के प्रमुख शासन सचिव बी.एल. मोहंती की उपस्थिति में तथा कृषि विभाग के निदेशक श्री देथा एवं सीड् कार्पोरेशन प्रबन्धक निदेशक रमेशचंद्र सोलंकी के सानिध्य में किया गया।

प्रशिक्षण पूर्णत: आवासीय था और प्रशिक्षार्थियों के क्षेत्रीय भ्रमण का भी समुचित प्रबन्ध किया गया था।

इस प्रशिक्षण का समापन राजस्थान के कृषि मंत्री हरजीराम बुरड़क की उपस्थिति में संपन्न हुआ।

सभी प्रशिक्षणार्थियों की राय थी कि उनके लिए यह प्रशिक्षण अत्यन्त सुखदायी, आनंददायी तथा उपयोगी रहा है। सीड्स कार्पोरेशन के प्रबन्ध निदेशक श्री सोलंकी द्वारा सबके प्रति आभार व्यक्त किया गया।

शिविर का संचालन राजवीर सिंह जी ने अपने अन्य सहयोगियों के साथ संपन्न किया।

संपादक, प्रकाशक एवं मुद्रक रमेश थानवी के लिए कुमार एण्ड कम्पनी, जयपुर में मुद्रित

रजिस्ट्रार ऑव न्यूज पेपर, नई दिल्ली के द्वारा पंजीकृत मासिक पत्रिका	RNI 43602/77

अलौकिक आलोक से
भरें हम
कलम अपनी
लिखें हम
अब उजाला
इस धरा के नाम।

- रमेश धानत्री

फोटो : अंजनी : शरद् पूर्णिमा का चांद